International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(6): 78-80

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(6): 78-80
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 09-09-2017
Accepted: 10-10-2017

जीवन कुमार
शोधच्छात्र, ज्योतिष विभाग,
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्,
श्रीरणवीरपरिसरः, जम्मू-कश्मीर,
भारत

Correspondence
जीवन कुमार
शोधच्छात्र, ज्योतिष विभाग,
राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्,
श्रीरणवीरपरिसरः, जम्मू-कश्मीर,
भारत

वास्तुशास्त्र में भूमि चयन एवं वास्तुपुरुष

जीवन कुमार

प्रस्तावना

ॐवास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवानः।
यत्त्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ।।[1]

वास्तुशास्त्र लोकोपयोगी वैदिक विधाओं में एक प्रमुख शास्त्र है । इस शास्त्र की प्रमुख विशेषता यह है कि गुरूत्व शक्ति, चुम्बकीय शक्ति एवं सौर ऊर्जा का प्रयोग करने के साथ साथ पञ्चमहाभूतों से तालमेल बैठाकर इस प्रकार के भवन का निर्माण करने की प्रविधि बन जाता है जिससे वहाँ रहने वाले और काम करने वाले लोगों का तन, मन एवं जीवन स्फूर्तिमान रहे । वस्तुतः मानवमात्र के लिए अपना आवास और कार्यस्थल इस प्रकार का होना चाहिए जहाँ वह अपने सभी कार्यों को करने में अनुकूलता का अनुभव कर सके ।

' वास्तु ' शब्द का अर्थ सामान्यतः आवास होता है किन्तु पाणिनी के अष्टाध्यायी में वास्तु शब्द की परिधि में भूमि और गृह दोनों आते हैं । वात्स्यायन ने अपनेकामसूत्र में कहा है कि वास्तुविद्या चौंसठ कलाओं में से एक कला है ।[2] वराहमिहिर ने वास्तुविद्या को आवसीय गृहनिर्माण तक रखा है । वास्तुशास्त्र का प्रधान लक्ष्य भवन निर्माण करते समय समग्र सृष्टि की प्रधान शक्तियों का प्रबन्धन अधिक से अधिक मात्रा में करना है । वास्तु का आधार भूमि है । यह कहने में अतिशयोक्ति नहीं है कि वास्तुशास्त्र में दिशा महत्वपूर्ण है । ज्योतिष और वास्तु यद्यपि उपकारक एवं उपकार्य है परन्तु कुछ मौलिकताएँ वास्तुशास्त्र में निहित है । किसी एक शास्त्र के अभ्यासार्थ या ज्ञानार्थ अन्य शास्त्र भी अवश्य उपकारक होते है । भारतीय वास्तुशास्त्रियों का दृढ़तर मत है कि वास्तुनयमों से बना आवासीय भवन व धार्मिक भवन व्यक्ति को सुख, समृद्धि एवं शान्ति प्रदान कर सकता है । भूखण्ड के वास्तुपद मण्डल में जिस वास्तु का स्थान है उस पर अनुरूप निर्माण ही करना चाहिए । प्रोटोन व न्यूट्रान सजीव कर गतिशील करते हैं । वास्तुशास्त्र की धारणा भी न्यूनाधिक यही है कि प्रकृति एवं मनुष्य में सामञ्जस्य बना रहना जरूरी है ।

वास्तु का सही अर्थ है कि भवन का प्रत्येक कक्ष अपनी विशेषता को सक्रिय कर दे । गृहपति मुख्यद्वार से प्रवेश करे तो उसकी सारी चिन्ता, श्रम व तनाव दूर हो जाए, शयन कक्ष में जाए तो गहरी नींद का आनन्द मिले, भोजन करे तो भोजन का रस ले सके रतिगृह में कामोपभोग का आनन्द ले सके, पूजागृह में देवध्यान में मग्न

[1]ऋग्वेद 7/54/1

[2]वात्स्यायनकामसूत्रम् 1/36

हो सके। वास्तु वैश्विक विज्ञान एवं सर्वाङ्गीण शास्त्र है, जिसमें विज्ञान और शास्त्रों का निष्कर्ष है। अतएव वास्तु दिन प्रतिदिन अपने स्वरूप में आ रहा है, आजकल प्रत्येक गृहपति वास्तुसम्मत भवन निर्माण के लिए व्यग्र है।

वास्तुशास्त्र मात्र निर्माण का कार्य नहीं है अपितु जीवन के परमलक्ष्य धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष का दाता है। अतः भवन निर्माण के पूर्व भूमि का चयन एवं परिक्षण नितान्त आवश्यक है। व्यक्ति अपने जीवन काल में अथक परिश्रम के धनार्जन से एक या दो मकान बना पता है और उम्मीद करता है कि वह मकान उसकी आने वाली पीढ़ियों के लिए शुभ रहेगा। जब भी कोई मकान खरीदने के लिए हम जाते है तो उस समय मन में यह विचार आता है कि हम किसी अच्छे वास्तुशास्त्री की सलाह ले लेनी चाहिए। अतः भूखण्ड क्रय करने से पूर्व हमें सर्वप्रथम जिस स्थान पर मकान खरीदना है उसके आसपास कोई श्मशान घाट नहीं होना चाहिए। मकान के सामने को मंदिर भी नहीं होना चाहिए। आसपास मंदिर होने से लोग वहाँ ईश्वर के सामने समर्पण भाव से अपने अपराधों का प्रायश्चित करते है और ईश्वर के सामने समर्पण भाव से अपने अपराधों स्वीकार करते हैं जिससे विरक्ति की भावनाएँ उत्पन्न होती है जो कि सामान्य गृहस्थ जीवन जीने के लिए शुभ नहीं है।

भूखण्ड के सामने किसी और मकान का कोना आना, मकान के सामने गड्ढा, कीचड़, बड़ा वृक्ष या खम्बा आदि होने से द्वारशूल माना जाता है। मकान के सामने खम्बा या वृक्ष के शूल से संतान हानि बताई जाती है।

मार्ग तरुकोण कूप स्तम्भ भ्रम विद्धं शुभदं द्वारम्।
उच्छ्रायादद्विगुणमितां त्यक्त्वा भूमिं न दोषाय ।।[3]

यदि व्यक्ति बना बनाया मकान खरीदते हैं तो सर्वप्रथम मकान का इतिहास जरूर जान लेना चाहिए। जैसे कितना पुराना है, जो व्यक्ति उसे बेच रहा है वह किसी दुर्घटना का शिकार तो नहीं हुआ था।

निखनेद्धस्तमात्रेण पुनस्ते नैव पूरयेत्।
पांशुनाधिकमध्यो न श्रेष्ठमध्यमाः क्रमात् ।।[4]

वास्तुशास्त्र के अनुसार भूमि के चार प्रकार बताए गए हैं। 1. गजपृष्ठ भूमि 2. कूर्मपृष्ठ भूमि 3. दैत्यपृष्ठ भूमि 4. नागपृष्ठ भूमि।

1 गजपृष्ठ भूमि - दक्षिण-पश्चिम नैऋत्य एवं वायव्य कोण में ऐ ऊचेआकार की भूमि को गजपृष्ठ कहते है।

दक्षिणे पश्चिमे चैव नैर्ऋत्ये वायुकोणके।
एभिरूच्चा यदा भूमिर्गजपृष्ठाऽभिधीयते ।। [5]

2 कूर्मपृष्ठ भूमि - मध्यभाग में विशेष ऊची और चारों दिशाओं में नीची भूमि को कूर्मपृष्ठ कहते है। ऐसी भूमि कर निवास प्रतिदिन उत्साह एवं धन धान्य की वृद्धि करता है। यथा-

मध्येऽत्युच्च भवेद्यत्र नीचं चैव चतुर्दिशम्।
कूर्मपृष्ठा भवेद् भूमिस्तत्र वासो विधियते ।। [6]

3. दैत्यपृष्ठ भूमि – पूर्व-ईशान तथा अग्निकोण में ऊची और पश्चिम में नीची भूमि को दैत्यपृष्ठ कहते है। इस प्रकार की भूमि पर बनाए गए घर में लक्ष्मी कभी प्रवेश नहीं करती और धन पुत्र पशुओं का विनाश करती है।

दैत्यपृष्ठे भवेद्वासो लक्ष्मीर्नायाति मन्दिरे।
धनपुत्रपशूनां च हानिरेव न संशयः ।। [7]

4. नागपृष्ठ भूमि - पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बाई लिए और दक्षिण-उत्तर में ऊची भूमि को नागपृष्ठ भूमि कहते है।

पूर्वपश्चिमयोर्दीर्घो दक्षिणोत्तर उच्चकः।
नागपृष्ठं विजानीयात् कर्तुरुच्चाटनं भवेत् ।। [8]

अतः निवास योग्य भूमि गजपृष्ठ और कूर्मपृष्ठ है।

भूमि की शुभाशुभता के परिक्षण के लिए बहुत सारी विधियां है। जिस भूखण्ड को खरीदना है उसके मध्य स्थान में एक हाथ चौड़ा व एक हाथ गहरा गड्ढा खोदना चाहिए फिर उसी गड्ढे से निकली मिट्टी से उसे भर देना चाहिए। यदि मिट्टी बच जाए तो भूखण्ड उत्तम है यदि मिट्टी बराबर बैठे तो मध्यम है। तथा मिट्टी न बचे तो अधम है।

वास्तुपुरुष- किसी भूखण्ड में औंधे मुंह, ईशान में सिर, उत्तर व पूर्व में कंधे वायव्य व अग्निकोण में कुहनियां, दोनों पैरों को मोड़े, कुहनियों को छूते हुए, जुड़े हुए तलवे वायव्य व अग्निकोण में पैर नैऋत्य लिए हुए लेटे होते है।

पुरातन काल में क्रोधित शिवजी के पसीने की बूँद से पृथ्वी एवं आकाश को आतंकित करने वाला एक विशाल राक्षस उत्पन्न हुआ था। उसकी विशालता से आतंकित देवताओं ने क्रोधित होकर उस असुर को नीचा करके भूमि में गाड़ दिया तथा स्वयं वहाँ खड़े रहे, जिस स्थान पर वे खड़े हुए उस पर उनका आधिपत्य हो गया तथा उसका क्षेत्राधिकार पा गए।

पुराकृतयुगे ह्यासीन्महद्भूतं समुत्थितम्।
व्याप्यमानं शरीरेण सकलं भुवनं ततः ।।

[3] बृहद्वास्तुमाला 1/82
[4] बृहद्वास्तुमाला 1/84
[5] बृहद्वास्तुमाला 1/87
[6] बृहद्वास्तुमाला 1/88
[7] बृहद्वास्तुमाला 1/89
[8] बृहद्वास्तुमाला 1/175

तद्दृष्ट्वा विस्मयं देवा गताः सेन्द्रा भयावृताः ।
ततस्तैः क्रोधसन्तप्तैर्गृहीत्वा तमथासुरम् ।।
विनिक्षप्तमधोवक्त्रं स्थितास्तत्रैव ते सुराः ।
तमेव वास्तुपुरुषं ब्रह्मा कल्पिवान् स्वयम् ।। [9]

वास्तुपुरुष के नियम विरुद्ध स्थापना पर उस पद के अधिकारी देवता अपनी प्रकृति के विपरीत प्रभाव देते है तथा यदि पद के स्वामित्व के अनुकूल स्थापना होती है तो अनुकूल जल प्राप्त होता है । इस असुर का नाम ब्रह्मा जी ने वास्तुपुरुष रखा तथा उन्हे यह वरदान दिया कि पृथ्वी पर प्रत्येक निर्माण तभी सफल माना जाएगा जब वास्तुपुरुष को पूज्य मानते हुए सम्मान करते हुए निर्माण होगा । 10, 81, 64, अथवा 16 पदीय वास्तु में वास्तुपुरुष का अस्तित्व विद्यमान है क्योंकि वे समस्त पदों के स्वामी है । वास्तुपुरुष वक्राकृति के है तथा उनका पृष्ठभाग ऊपर उठा हुआ होता है । वास्तुपुरुष मण्डल का उद्गम वैदिक परम्पराओं में खोजा जा सकता है । वैदिक काल में यज्ञ पुरुष की कल्पना के द्वारा देवताओं के पक्ष में दिया जाने वाला द्रव्य जो आहूति कहा जाता है समन्वित त्रिविधा पद्धति पर आधारित है । भारतीय भवन नर्माण कलाओं का उद्भव वैदिक यज्ञ वेदी से हुआ है । यज्ञ में यज्ञपुरुष की कल्पना के द्वारा त्रिविध द्रव्य त्याग अर्थात देवताओं के पक्ष में अर्पण या द्रव्यविशेष का त्याग जिसे आहूति कहा जाता है । भूमिचयन, भूमिशोधन, इष्टिकर्म, इष्टिकाचयन आदि प्रक्रियाएँ वैदिक यज्ञ के अनिवार्य अंग थे । इन्हीं के आधार पर कालान्तर में भवन निर्माण के नियम बनाए गए । सामान्य जन धर्मभीरु होता है अतः उनसे नियमों के पालन करने में आसानी होती है । यज्ञपुरुष या बादमें आज के वास्तुपुरुष की सत्ता आधुनिक नगर विन्यास से कही अधिक है । वास्तुशास्त्र के सिद्धान्त के परिपालन से चुम्बकीय प्रवाह, दिशाजन्य प्रवाह, वायु प्रवाह एवं गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव से मनुष्य के जीवन में सुख शान्ति आती है ।

परिशीलितग्रन्थ-

1. ऋग्वेद
2. वात्स्यायनकामसूत्र
3. बृहद्वास्तुमाला डा. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी चौखम्बासुरभारती प्रकाशन वाराणसी
4. वास्तुशास्त्र सिद्धान्त एक निष्पक्ष समीक्षा

[9]बृहद्वास्तुमाला 1/1-3